क्या फिर पराजित हुए हैं हम

कुछ घटनाओं पर विचार करें। लोक सभा के चुनाव में नरेन्द्र मोदी की छवि इस तरह से बनाई गई कि वे लोकआकांक्षा को पूरी करने की क्षमता और युक्ति जानते हैं। उनकी इच्छा शक्ति भावनाओं को कार्य में बदलने की है। यह छवि मीडिया के माध्यम से बनाई गई। उस समय के अन्य दल और उसके नेताओं की तुलना को करते हुए बनाई गई। उसका आधार गुजरात का विकास बताया गया। गुजरात में हुए नकारात्मक कार्यों के आक्षेप और आरोप जो वर्षों से उनका पीछा कर रहे थे, कमजोर किये गये। परिणामत: मोदी को अनुमान से अधिक सफलता मिली।

विधानसभा के चुनावों में भी मोदी लहर और तत्वों ने काम किया और परिणाम भारतीय जनता पार्टी के पक्ष में आये। राजस्थान में गहलोत सरकार के कामों से अधिक कांग्रेस की आलोचना बढ़त पर रही। मध्यप्रदेश में मोदी-चौहान की युति से परिणाम अधिक बेहतर आये। पंजाब, हरियाणा तथा अन्य राज्यों में भी परिणामों पर बदलाव की यह बयार हावी रही। मीडिया इन सभी जगह उन छवियों और आकांक्षाओं को लोगों के मन में पैठाता रहा जो बदलाव की ओर ले जाने में सहायक हो रही थीं।

इसके कुछ समय बाद दिल्ली में विधानसभा के चुनाव हुए। यहाँ लोग न तो उस छवि से प्रभावित हुए और न बदलाव की उस बयार से जो लोकसभा या विधानसभाओं के दौरान प्रवाहित हो रही थी। यहाँ तो हाल ही शक्ति अर्जित कर विजय का मुहावरा बने व्यक्तित्व के विरोध में जैसे तूफान सा आया जिसने इससे पूर्व के सभी अनुमानों पर पानी फेर दिया। 'आप" और केजरीवाल को एकतरफा विजय मिली। कांग्रेस शून्य हो गई और भाजपा वोट से कम घटी पर संख्या से बहुत कम हो गई। मीडिया यहां भी इस नई बयार का साथी बना था, यह अब भी कहा जा रहा है।

लोकसभा, विधानसभाओं और दिल्ली विधानसभा में लोगों का मत बदल गया। यह बदलाव छवि, आकांक्षा और उभारे गये विचार के आधार पर था। रणनीति में मुख्यत: यही तीन बातें सामने थीं। यह बदलाव दलीय, जातीय, या रूझानी गणितों के आधार पर नहीं बदला है। यह बदलाव सामान्यत: पारंपरिक अनुमानों के अनुरूप भी नहीं रहा है। यह बदलाव बहुत तार्किक, तथ्य आधारित या वैज्ञानिक दृष्टिकोण का परिणाम भी नहीं कहा जा सकता है। यह बदलाव लोक आकांक्षा के साथ ही लोक भावना के आधार पर रहा है। भावना और आकांक्षा वस्तुनिष्ठ नहीं होती है, वे प्राय: भावनिष्ठ जिसे अंग्रेजी में सबजेक्टिव कहते हैं, ही होती है। लोग जिस विश्वास से लोकसभा में मत दे रहे थे,

दिल्ली में वे उस विश्वास या भरोसे को उलट रहे थे। दिल्ली में जो एकतरफा जीत रहा था, कुछ माह पूर्व ही वह विचार, विश्वास और छवि लोकसभा तथा विधानसभाओं में बुरी तरह पराजित हो रही थी।

मत और लोकमत को जानने-समझने वालों के लिए कांग्रेस लहर और जनता लहर या नेहरू प्रभाव अथवा पारंपरिक वोट या वोट बैंक जैसे पारंपरिक अनुमानों के विपरीत यह लोक व्यवहार था। लोगों के इस व्यवहार के बारे में तो उन क्षेत्रों के समीक्षक और विश्लेषक गवेषणा कर रहे होंगे। पर यह पता नहीं है कि मीडिया के अध्येता और विश्लेषक मीडिया के व्यवहार और उसकी भूमिका के बारे में क्या कुछ विचार कर रहे हैं। यह इसलिए कि इन चुनावों में भी छवि, विचार, आकांक्षा और भावना की रणनीति मीडिया के माध्यम का ही उपयोग करते हुए कामयाब हुई है। रणनीति दलीय नीतिकारों की थी पर उसे लोगों तक पहुंचाने में मीडिया, मीडिया के सभी स्वरूपों का सफल उपयोग किया गया है। अनुमान तो यह भी है कि चुनावों के लिए नोट, शराब आदि की रणनीति इन चुनावों में उस मात्रा में उपयोग नहीं की गई जितनी पहले हुए चुनावों में की जाती रही है। लोक सभा के समय यह कहा गया था कि मुख्यधारा के मीडिया से अधिक उपयोग सोशल मीडिया का किया गया पर दिल्ली के चुनाव में तो द्वंद के दोनों मठ सोशल मीडिया पर भी एक दूसरे के बराबर ही उसका उपयोग कर रहे थे।

मीडिया के संबंध में यह कहा जाता रहा है कि वह लोगों के विचार और व्यवहार को प्रभावित करता है। लोग उसके माध्यम से अपना मत बनाते, संशोधित करते या नया मत तैयार करते हैं। वह लोगों की आकांक्षाओं, भावनाओं और कठिनाइयों का जानकार होता है और उनके समाधान के लिए लोगों की ओर से पैरवी करता है। यह भी बताया जाता रहा है कि वह भ्रम, प्रचार और स्वार्थ के कुहासों से तथ्य और सत्य को सामने लाकर लोगों को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाने में सहायता करता है। इन कसौटियों पर इन चुनावों के दौरान दलीय योजनाओं, मन्तव्यों, आकांक्षाओं के लिए बनाई गई रणनीतियों के संबंध में लोगों के अज्ञान को ज्ञान में बदलने का कितना प्रयत्न मीडिया ने किया है, इसका विवेचन मीडिया को करना तो चाहिये।

अब तक तो यही माना गया है कि उसका व्यवसाय उसे इन कसौटियों के चक्रव्यूह में फँसाता नहीं है। वह इन कसौटियों को जानते हुए ही अपना व्यवसाय करता रहा है, कर रहा है। ऐसा इसलिए भी कहा जाता है कि मीडिया न तो स्वार्थ और सत्ता पथ पर विजय के लिए मध्यस्थता करता है और न ही वह बाजार या सत्ता पाने के लिए माध्यम है।

नेहरू काल में लोकमत का मामला बहुत साफ नहीं था। इंदिरा गांधी का राज्यारोहण भी लोकमत से अधिक अपने ही दल के अंतर्विरोध का परिणाम था। हां, उसमें उन्होंने अपने को लोक

आकांक्षा से जरूर जोड़कर प्रस्तुत किया था। जयप्रकाश नारायण का आंदोलन संभवत: आजादी के बाद पहला ऐसा प्रसंग था जो लोक आकांक्षा के लिए था और उसने लोगों में भावनात्मक ज्वार पैदा कर एक स्थापित छवि को तोड़ा था। उस समय भी मीडिया एक परीक्षा से गुजरा था और ज्यादातर लोग मानते हैं कि उसमें वह असफल रहा। इमरजेंसी लगने पर उसका व्यवहार क्या रहा है, उसे सब जानते हैं। उसके बाद यह अवसर है। क्या मीडिया सचमुच यह कहने की स्थिति में है कि उसने इस पूरे प्रसंग में रणनीतिकारों का साथ न देते हुए लोगों को उन कुहासों से बाहर लाने का प्रयत्न किया है जिसकी वे उससे अपेक्षा करते हैं या अपने लाभ-लोभ में वह फिर असफल हुआ है या हो रहा है। लोकमत के निर्माण के संबंध में यह विवेचन या अंतर्मंथन बहुत आवश्यक है।

****